मैथिली रंगमंच

-डॉ. राहुल सिद्धार्थ

प्रस्तावना

संस्कृत रंगमंच के अवसान के साथ ही लोक नाटकों का उदय भारतीय समाज में होता है। लोक नाटक में लोक जीवन की संपूर्ण विविधताएँ विद्यमान होती हैं। लोक नाटक में गीत, नृत्य, संबंधित भाषागत वैशिष्ट्य एवं परम्पराओं की उपस्थिति होती है। लोक नाटक पूर्ण रूप से किसी क्षेत्रविशिष्टता को सम्पूर्णता में रंगमंच पर उपस्थित करता है। लोक नाटक का संबंध समाज के उन अशिक्षित समुदाय से भी है जो अपनी परम्परा का रसास्वादन लोक नाटक के माध्यम से करते हैं। डॉ नगेन्द्र का मानना है कि लोक नाटक सामूहिक आवश्यकताओं और प्रेरणाओं के कारण निर्मित होने से लोक जीवन का प्रतिधित्व करता है। भारत वर्ष की जितनी प्रादेशिक भाषाएँ हैं लोक नाटकों की उतनी ही परम्पराएं किसी न किसी रूप में भारतीय समाज में विद्यमान है। संस्कृत नाटकों की परम्परा का पालन लोक नाटकों में अधिकांशतः किया गया है लेकिन इस परम्परा का निर्वाह सर्वत्र देखने को नहीं मिलता है। सूत्रधार, विदूषक, नट-नटी, मंगलाचरण, भरतवाक्य की परम्परा को संस्कृत नाट्यशास्त्र से ही ग्रहण किया गया है।

डॉ. वशिष्ठ नारायण त्रिपाठी ने अपनी पुस्तक "भारतीय लोकनाट्य" की भूमिका में लिखा है, "लोककला रूपों की जातीय संस्कृति से गहरी निकटता रही है। ये कला रूप अलग-अलग क्षेत्रों में अपनी विशिष्टता के अनुरूप परस्पर भिन्न शैल्पिक निजता रखने के बावजूद अंतर्वस्तु के स्तर पर गहरे एकात्म होते हैं। लोकगीतों, कलाओं और लोकनाट्य रूपों के सन्दर्भ में इसे देखा जा सकता है।"[1]

लोक नाटकों के उदय के संदर्भ में माना जा सकता है कि संस्कृत नाटकों के पश्चात मध्यकाल के अंतर्गत भक्तिकाल में इसका उदय होता है। इस सन्दर्भ में इस तथ्य को देखा जा सकता है कि लोक नाटक किसी न किसी संदर्भ में धार्मिक परम्पराओं को अपने में आत्मसात करता है। लोकनाटकों के उदय के सन्दर्भ में बलवंत गार्गी ने लिखा है, "संस्कृत नाटक विद्वानों, श्रेष्ठियों और दरबारियों के लिए था। इसकी भाषा बहुत गूढ़ और अलंकृत होती थी। यह जनसाधारण के जीवन में घुला-मिला रहा है। समय के साथ-साथ यह अपना रूप बदलता और बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार अपने- आपको ढालता रहा है।"[2]

मैथिली नाटक विकास क्रम

इसी क्रम में मैथिली नाटक का भी विकास होता है। नाट्यशास्त्र में वर्णित नाटक की शास्त्रीय परम्परा के विपरीत लोक नाटकों में स्थानीयता का प्रयोग प्रारम्भ होता है। मिथिला में नाटक के प्रारम्भ होने का समय 14 वीं शताब्दी माना जाता है। इस लोक नाट्य की विद्यमानता मैथिल समाज में आज तक है। मैथिल प्रदेश में मंचित इस लोक नाट्य विधा को कीर्तनिया नाम से ही पहचाना जाता है।

कीर्तनिया नाट्य परम्परा में धूर्तसमागम, पारिजात हरण, गोरक्षा विजय, गौरी स्वंयवर, उषा हरण आदि प्रमुख नाटक माने जाते हैं। इस विधा के महत्वपूर्ण नाटककारों में ज्योतिरीश्वर ठाकुर, उमापति, विद्यापति, गोकुलनंद, हर्षनाथ झा, शिवनंदन मिश्र आदि हैं। इन नाटकों के केन्द्रीय विषय भक्ति हैं तथा इनके आराध्य कृष्ण हैं। कीर्तनिया नाट्यधारा का विकास ही समय के साथ आधुनिक मैथिल नाटक के रूप में सामने आता है। कीर्तनिया नाटक के केंद्र में मूल रूप में भक्ति हैं तो आधुनिक मैथिल नाटक के केंद्र में समसामयिक सामाजिक स्थिति की विद्यमानता है। कीर्तनिया नाटक में गायन एवं नृत्य की प्रधानता थी तो मैथिल नाटक में इसके स्थान पर यथार्थवादी रंगमंच के कथ्य और संवाद शैली को ग्रहण किया गया। आधुनिक मैथिल नाटक की शुरुआत यहीं से होती है।

पं. जीवन झा ने सन 1905 में 'सुन्दर संयोग' नाम से एक नाटक लिखा। पं. जीवन झा काशी महाराज प्रभुनारायण सिंह (1855- 1931) के दरबार में दानाध्यक्ष थे। इन्होने राजदरबार में काम करते हुए भी अपनी रचना में सामाजिक स्थितियों का चित्रण किया। पं. जीवन झा का मैथिली नाटक के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान है। इनको विरासत के रूप में संस्कृत साहित्य की समृद्ध परम्परा मिली थी। इसी समय काशी में भारतेंदु हरिश्चन्द्र द्वारा हिंदी नाटक का प्रचार-प्रसार हो रहा था। इस समय पारसी नाट्य परम्परा भी समाज में विद्यमान थी। पं. जीवन झा ने सर्वप्रथम संस्कृत परम्परा के स्थान पर विशुद्ध मैथिली भाषा में संवाद लेखन की परम्परा की शुरुआत की। इनको मैथिली नाटक के कथानक एवं शिल्प में परिवर्तन करने का श्रेय भी दिया जाता है। चूंकि पं. जीवन झा संस्कृत के विद्वान् भी थे इसीलिए मैथिली नाट्य रचना करते हुए उस पर उस पर संस्कृत नाट्य सिद्धांतों का प्रभाव दिखता है।

मैथिली नाटक को कथ्य के अनुसार चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

(क) पौराणिक कथ्य प्रधान नाटकः सामवती पुनर्जन्म (पं. जीवन झा), दुर्गा विजय (पं. श्री जीवननाथ झा), आचार्यद्रोण (श्रीचन्द्रकांत झा), रुक्मिणी हरण (गोविन्द झा)

(ख) ऐतिहासिक कथ्य प्रधान नाटकः विद्यापति (श्री विद्यानाथ राय), उगना (ईशनाथ झा), शास्त्रार्थ (श्री राजेश्वर झा), राजा शिव सिंह (पं.श्री गोविन्द झा), चंद्रकांत (श्री मोहन चौधरी)

(ग) राजनीतिक कथ्य प्रधान नाटकः फेरार (श्री शारदानंद झा), वीरचक्र (श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिन्हा), खट्टर काका चीन में (श्री कपिल प्रभाकर)

घ) सामाजिक कथ्य प्रधान नाटक सुन्दर-संयोग (पं.जीवा झा), बसात (पं. श्री गोविन्द झा), एक छल राजा (श्री उदय नारायण 'नचिकेता'), भाफईत चाहक जिनगी, लेटाइत आँचर (श्री शुधांशु शेखर चौधरी), जुएल कनकनी, ओकरा आंगनक बारहमासा, काठक लोक, छुतहा बैल आदि (महेंद्र मलंगिया)

मैथिली नाटक और नाटककार महेंद्र मलंगियाः

यह शोध पत्र महेंद्र मलंगिया द्वारा मैथिली में लिखित नाटक के सामाजिक पक्ष को विश्लेषित करता है तथा कीर्तनिया नाटक की धारा से अलग आधुनिक समय में इसकी प्रासंगिकता को केंद्र में रखता है।

यद्यपि पं. जीवन झा को मैथिली भाषा में सामाजिक विषयक नाटक के जन्मदाता के रूप में महत्व प्राप्त है। इसके पूर्व ज्योतिरीश्वर ठाकुर द्वारा 'धूर्तसमागम' नाटक लिखा गया किन्तु इसे नाटक की श्रेणी में नहीं मानते हुए, इसे प्रहसन ही माना गया। पं. जीवन झा से पूर्व लिखित मैथिली नाटकों में संस्कृत एवं प्राकृत भाषा का मिश्रण मिलता है। विशुद्ध मैथिली नाटक की शुरुआत पं. जीवन झा से ही होती है।

महेंद्र मलंगिया द्वारा लिखित नाटक 'जुएल कनकनी' का प्रकाशन सन् 1972 में गंगा प्रकाशन, लोहना (जनकपुर धाम), नेपाल द्वारा किया गया। नाटककार ने इसको संस्कृत नाट्य परम्परा के विपरीत अंकों में नहीं विभाजित करते हुए इसे दो भागों में विभाजित किया है। इस नाटक में कुल 5 (पुरुष पात्र) एवं 2 (स्त्री पात्र) हैं। यह नाटक अंक एवं दृश्य में विभाजित नहीं है। नाटककार ने मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सामाजिक समस्याओं को रंगमंच पर लाने का प्रयास किया है। नाटक के विषय के केंद्र में निम्नवर्ग की स्थिति एवं मनःस्थिति है। यह नाटक मैथिल समाज के निम्न मध्यवर्गीय समाज की विपद स्थिति एवं उनके शारीरिक-मानसिक उत्पीडन के द्वंद्व को मंच पर उद्घाटित करता है। यह नाटक मुख्य पात्र 'संझा' की विवशता के साथ खेलने वाले 'बैजू' जैसे मानसिक रूप से विपन्न पात्र के माध्यम से सामाजिक ताने-बाने को दर्शक के समक्ष प्रस्तुत करता है। यह नाटक मनुष्य के अवचेतन मन की एक-एक उलझन को दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत करने की कोशिश करता है। इस रूप में मैथिली नाटक हिंदी के मुख्यधारा के नाटकों के साथ कथ्य के स्तर समय के साथ अपने को समृद्ध करते हुए रंगमंच पर अपने आपको प्रस्तुत करता है तथा एक विशिष्ट प्रदेश की समस्या को उसी भाषा में रंगमंच पर प्रदर्शित करता है। इस नाटक (जुएल कनकनी) का कथानक यथार्थवादी है एवं पाश्चात्य नाट्य परम्परा के अनुरूप होते हुए भी आधुनिक मैथिली साहित्य एवं रंगमंच हेतु विशिष्ट महत्व रखता है। प्रस्तुत नाटक मनुष्य के अवचेतन को आधुनिक कथ्य एवं अतियथार्थवादी शिल्प के माध्यम से समाज के मध्य व्याप्त मानवीय चेतना की अनुपस्थिति एवं यौनिकता के प्रश्न को मंच पर उपस्थित करते हुए इसके सामाजिक परिष्कार का रास्ता ढूढने की कोशिश करता है।

इस नाटक का नायक 'जीबू' हीन मनोग्रंथि एवं कुंठा का शिकार है एवं उसी के अनुरूप ही व्यवहार भी करता है। 'संझा' नारी जागृति एवं आधुनिकनारी के रूप में नाटक में उपस्थित है। 'संझा' का संवाद नाटक की उपादेयता को स्पष्ट करता है "के कहैत छैक जे मौगी कमजोर होइत छैक। ओ सभ किछुकें पचा सकैत छैक आ पुरुषकें नहि पचाओल होइत छैक तें दारु पीबैत छैक।" नारी सशक्तिकरण के सन्दर्भ में महेंद्र मलंगिया 80 के दशक में ही मैथिली रंगमंच पर समाज के एक महत्वपूर्ण प्रश्न को लेकर उपस्थित होते हैं। इस नाटक में उठाई जाने वाली समस्या मानवीय मूल्य के क्षरण की ओर संकेत करता है एवं अंत में एक आदर्श स्थिति की स्थापना करने का प्रयास करता है।

नाटक का दृश्य संयोजन अति यथार्थवादी परम्परा के अनुसार ही किया गया है। यह नाटक अपने कथ्य के अनुसार ही निम्न मध्यवर्गीय पारिवारिक विडंबना, विसंगति आदि के बीच मानवीय संघर्ष एवं उसकी जिजीविषा को नाटक में प्रतिष्टित करता है। 'जुएल कनकनी' नाटक अपनी भाषागत प्रयोग में नवीनता को धारण करता है। मैथिली नाटक में गीतों का प्राधान्य होता है लेकिन इस नाटक में गीत को नाटककार ने

स्थान ही नहीं दिया है। नाटक का मुख्य स्त्री पात्र 'संझा' का चरित्र यथार्थवादी है जो सामजिक संघर्ष के उत्थान- पतन को मंच पर प्रस्तुत करने में सक्षम हैं तो वहीं 'बैजू' का चरित्र असंवेदनशील, विलासी, विवेकहीन एवं स्वार्थी पुरुष के रूप में चित्रित किया गया है।

यह नाटक 'संझा' जैसे स्त्री पात्र के माध्यम से समाज में नारी की जागृति को स्वर देता है। नाटककार का उद्देश्य समाज में व्याप्त अनैतिक कुत्सित भावना को समाप्त कर लोगों के हृदय को उदात्त बनाना ही है। नारी जागृति के स्वर को मैथिल रंगमंच पर प्रस्तुत करते हुए नाटककार ने एक सशक्त मैथिल समाज की कल्पना की है एवं उसकी बुराई की भर्त्सना भी की है। यह मैथिल नाटक संस्कृत नाट्य परम्परा से अलग हटते हुए समापन भी भिन्न तरीके से ही करता है-

संझाः [खूब जोरसँ चिकड़ि क] अओर जोर सँ! अओर जोर सॅ! खूब जोर से मरमरा दे एकर करेज ! तोड़ि एकर पयर ! रे जीबुआ ! तोड़ि दे एकर हाथ जाहि हाथसँ हमर सबक इज्जति लुटलक।

[जीबू बैजू बाँहि पर पयरराखि क मरमरा दैछ। बैजूखूब जोर सं किकिया उठैत अछि। रे नीलू! तोरा बहींन कें कुदृष्टिएँ देखने छलौक। निकालि ले एकद दूनू आँखि ![3]

जुएल कनकनी' नाटक अपने कथ्य एवं भाषा के माध्यम से मैथिली समाज की दुश्चिताओं को रंगमंच पर प्रस्तुत करने में सक्षम होता है। यह नाटक ग्रामीण परिवेश से ऐसी समस्या को रंगमंच पर लाकर साक्षात्कार कराता है जिसके संबंध में अक्सर यह कहा जाता कि इन तरह की समस्याएं शहरों में ही मौजूद होती है। मलंगिया अपने नाटक के कथ्य के माध्यम से शहर और गाँव के पाट को एक साकर देते हैं और लगने लगता है कि एक वृहत्तर परिधि में समस्याएँ प्रत्येक जगह विद्यमान है। मलंगिया अपने भाषिक प्रयोग को लेकर सजग एवं सचेष्ट हैं तथा इस बात का हमेशा ध्यान रखते हैं कि मैथिली भाषा की कोमलता एवं टोन सर्वत्र उपस्थित हो। मैथिली भाषा का टोन नाटक के संवादों को मंच पर प्रभावोत्पादक बनाता है जिसका ध्यान नाटककार ने सर्वत्र ही रखा है। भाषा के स्तर यह नाटक मंचीय संभावनों से युक्त है जो इस नाटककार की विशिष्टता है।

महेंद्र मलंगिया के नाटक 'ओकराअंगनाक बारहमासा' का कथा वस्तु संक्षिप्त है जो भारतीय ऋतुओं के समानांतर मैथिल क्षेत्र के आर्थिक रूप से विपन्न समाज का चित्रण करता है। नाटक का नायक 'दम्मा' (साँस की बीमारी) से पीड़ित है। उसे गाँव में किसी भी प्रकार का रोजगार नहीं मिलता है। इन बदलते हुए बारह मासों में उसके जीवन में कोई भी परिवर्तन नहीं होता है। वर्ष का कोई भी मास उसके जीवन में उल्लास लेकर नहीं आता है। पूस मास में भी उसके घर में अन्न नहीं आता है और इसी तरह जीवन के सभी मास उदासी के साथ ही बीतते हैं।

इस नाटक का पहला दृश्य 'कार्तिक मास' का है। नाटककार ने प्रथम दृश्य की शुरुआत इस प्रकार की हैं,

"कातिक हे सखि बोनियो ने लगै छै,

अन्नक नहि कोनो बाट यो।

पेटक ज्वाला रामा सहलो ने जाई छै,

घर-घर हुलकय राड़ यो।।'[4]

कार्तिक मास में भी अन्न का कोई उपाय नहीं दिखता है। भूख से 'मल्लर' के परिवार की हालत खराब है और घर में अन्न का एक दाना भी भूख मिटाने के लिए नहीं है। मैथिली गीत की पंक्ति के माध्यम से नाटककार निर्धन वर्ग के परिवार की स्थिति का चित्र मंच पर उकेरता है। यह गीत जीवन के दुःख का गीत है, जीवन के संघर्ष का गीत है। यह दुःख का गीत 'मल्लर' के परिवार के माध्यम से मैथिल क्षेत्र के उन सभी परिवारों का सामूहिक गीत बन जाता है जिसकी जिन्दगी में अन्न की आशा ही नहीं है। महेंद्र मलंगिया का यह मैथिली नाटक मैथिली भाषा की विशिष्टता को धारण करता हुआ अपने नए कथ्य को रंगमच पर लाता है तथा हिंदी रंगमंच के बीच में उसकी विशिष्टता को स्थापित करता है।

नाटक का दूसरा दृश्य 'अगहन' मास से प्रारम्भ होता है और नाटककार ने पुनः गीत के माध्यम से इस दृश्य की शुरुआत की है-

"अगहन हे सखि धान मरहन्ना,

कोना क' सधाओत कर्ज यो।

एहि सोच कारण राड़ झखै छै,

हांसू नेने हाथ यो।।"[5]

अगहन मास तो कृषक वर्ग के लिए उल्लास का मास होता है। धान की फसल के आगमन से गाँव में खुशहाली का माहौल रहता है। नाटककार ने इस नाटक में भी मिथिला क्षेत्र के गाँव का ही वर्णन किया है जिसकी जीविका का मूल आधार कृषि ही है। किसानों के लिए यह मास ऐसे उपहार लेकर आता है जिसके सहारे पूरे वर्ष उनके जीवन का भरण पोषण होना है। लेकिन फसल अच्छी नहीं होने के कारण सारा उत्साह खत्म हो जाता है। वे हाथ में हंसुआ लेकर फसल काटने को तैयार तो है लेकिन फसल अच्छी नहीं होने के कारण उनकी स्थिति विपन्न ही बनी रह जाती है।

नाटक के तीसरे दृश्य की शुरुआत 'पूस' मास से होती है एवं अंत में बारहवें मास के रूप में 'आसिन' मास तक का चित्रण नाटक में किया गया है। 'पूस' मास के संबंध में नाटककार लिखता है-

"पूस हे सखि घर भेल खाली,

कहाँसं आनत धान यो?

मालिक सभ शैतान बनल है।

जुत्ता नेने हाथ यो।।”[6]

नाटककार ने पूस मास में ही घर में अन्न के अभाव का चित्रण किया गीत के माध्यम से किया है और परेशानी इस बात की है कि मालिक से भी अन्न मिलना मुश्किल है क्योकि वे पहले से ही दण्डित करने के लिए तैयार हैं।

नाटक का मुख्य पात्र 'मल्लर' अपने परिवार के साथ 'केकड़ा' पकड़कर खाने को विवश है। परिवार के सभी बच्चे एक ही गोनर (एक प्रकार की चटाई) को जाड़े की रात में ओढ़कर सोने के लिए विवश है और बारीश की बूंदे घर के अन्दर टपकती रहती है। ऐसी आर्थिक विपन्नता की स्थिति में 'मल्लर' बालू (रेत) खाकर दम्मा का इलाज खुद ही करता है। 'मल्लर' का बेटा रोजगार के लिए शहर जाता तो है लेकिन वहाँ भी उसे किसी प्रकार का रोजगार नहीं मिलता और वापस घर आने के लिए उसके पास किराए के लिए रुपये भी नहीं होते। ऐसी स्थिति में उसे अपने पिता की मृत्यु की सूचना मिलती है। अपनी गरीबी की स्थिति में वह दाह-संस्कार बिना कफ़न के ही करने के लिए मजबूर होता है।

मैथिली नाट्य समीक्षक प्रो. अजयदेव मिश्र ने इनके नाटक के बारे में लिखा है, "वर्तमान पुस्तक में मलंगिया जी आधुनिक संघर्षरत जीवनक परिप्रेक्ष्य में मिथिलाक अकिंचन वर्गक असह्य क्लेशक वर्णन कएलन्हि अछि। ई क्लेश शारीरिक छैक, मानसिक सेहो, किन्तु बुझना जाइछ जे नाटककार अपन सृजनात्मक वृत्तिक प्रयोगद्वारा नव-नव प्रसंगोदभावन कए कथावस्तुक विस्तार करैत एहि क्लेशकें यथार्थतः मानवीय बना दैत छथि।"[7]

यह मैथिली नाटक दरअसल स्वतंत्र भारत के रंगमंच पर भारत के आर्थिक रूप से विपन्न वर्ग को रंगमंच पर लाने का प्रयास करता है। यह नाटक मंच पर इस कथ्य एवं सत्य की प्रतिष्ठा करता है कि आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग की उपस्थिति सभी समाज में विद्यमान है एवं मैथिली नाटक के माध्यम से वही अनुत्तरित प्रश्न मंच पर प्रतिष्ठित होता है। इसके साथ ही यह नाटक केवल गरीबी की ही स्थिति का चित्रण नहीं करता बल्कि गाँव के अमीर लोगों के द्वारा 'मल्लर' की बहू के सामने किए जाने अशोभनीय व्यवहार को प्रश्नचिन्हित करता है-

छठमः एना नाटक नै कर।

[छठम जाँघ उघारि क' फोंसरीफोडैछ। दोसर मूड़ी घुमा लैछ ।] लेब' मे जेहने मोनरहौक तेहने राख।

[चुप्पी]

मुनमा ![8]

यह नाटक कुल 9 पात्रों के माध्यम से अपने-आपको रंगमंच पर प्रस्तुत करता है। इसमें पात्र का कोई नाम नहीं बल्कि वे सभी पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा आदि नाम से संबोधित किए गए हैं। नाटककार मूल पात्र 'मल्लर' अभाव में रहते हुए भी स्वाभिमानी है।

जब आठवां पात्र यह कहता है-

आठमः एहन देह राखिक 'पुतोहु जे भिखमंगनी कर' जाइत छौ से लाज नहि होइत छौ?

चारिमः की?

आठमः कही कोनो दोसर उपाय क 'क' अनतौ

चारिमः कोन उपाय?

आठम : देह बेच लेतौ।'[9]

यह सुनकर 'मल्लर' आग बबूला हो उठता है और वह कहता है, "हमगल्ती केलीजेअहाँसन नीच आदमी स' कुछ मंगली।"

नाटक का स्त्री पात्र 'मल्लर' की बहू है। वह अभाव में रहती हुई भी अपने दम्मा पीड़ित ससुर की सेवा में सदैव लगी रहती है लेकिन अपने समाज और राजनीति पर उसका दुःख इस संवाद से व्यक्त होता है-

दोसरः बजरखसुआ सरकार खाली हमारा आउर स 'भोट लेब' लागी बेहाल रहै हय। [क्षणिक विराम भोटक बेरमे खाली कहत जे ई होतौ त' ओ होतौ आभोटक बाद फेनो.... "[10]

इस नाटक के संवाद संक्षिप्त हैं लेकिन उसमें नाटकीयता के तत्व विद्‌यमान है। मैथिली भाषा के विशेष टोन की उपस्थिति नाटक के संवादों की विशिष्टता है। मलंगिया जी मैथिली रहन-सहन, आचार- विचार आदि को यथारूप नाटक में चित्रित करने में सफल होते हैं एवं इसके साथ ही इस प्रदेश के लोक व्यवहार को भी प्रस्तुत करने में सफल होते हैं। भाषा नाटक के लिए महत्वपूर्ण कड़ी है। इस संबंध में भाषा वैज्ञानिक डॉ. रामावतार यादव जी ने लिखा है, " महेंद्रमलंगियाक नाटक उत्कर्षक प्रमुख आधार ओकर यथार्थपरक ग्रामीण परिवेश, पात्रसभक विषम आर्थिक विपन्नता, घटनाविकासक अकृत्रिम सहजता, नाटकीय परम्परा हीनता, मंच निर्देशनक सटीकता वा मंचनीयता नहि, अपितु ओहिमे प्रयुक्तक कथोपकथनकभाषाक प्रखर तीक्ष्णता, जीवन्तता, जीवन-सानिध्यता, अभिव्यजनशीलता ओ सम्प्रेषणीयता अछि।"[11]

यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि मैथिली भाषा में आधुनिक कथा साहित्य में जो स्थान प्रो. हरिमोहन झा का है आधुनिक मैथिली नाटक के क्षेत्र में महेंद्र मलंगिया का वही स्थान है। इन्होंने मैथिली भाषा के माध्यम से बड़ी ही सहजता से इस क्षेत्र की विविध समस्याओं को रंगमंच पर लाने का सार्थक प्रयास किया है। नाटककार ने कथ्य को सफलतापूर्वक प्रस्तुत करने में मैथिली भाषा की विविध छवियों को सहारा

लिया है। हिंदी नाटक और रंगमंच के वृहत्तर परिधि में मैथिली नाटक, नाटककार महेंद्र मलंगिया के माध्यम से आधुनिक भाव बोध और विविध समस्या को मंच पर सार्थक रूप से प्रस्तुत करते हैं।

सन्दर्भः

1. त्रिपाठी, वशिष्ठ नारायण, भारतीय लोक नाट्य (भूमिका), वाणी प्रकाशन, दिल्ली पृष्ठ १

2. गार्गी, बलवंत, रंगमंच, पृष्ठ 92

3. झा, प्रकाश (संकलन एवं सम्पादन), महेंद्र मलंगियाक सात नाटक, मैथिली लोक रंग प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 85

4. वहीं, पृष्ठ 89

5. वहीं, पृष्ठ 96

6. वहीं, पृष्ठ 102

7. मिश्र, जयदेव, ओकरा आगनक् बारहमासा (दू शब्द)

8. झा, प्रकाश (संकलन एवं सम्पादन), महेंद्र मलंगियाक सात नाटक, मैथिली लोक रंग प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 105

9. वहीं, पृष्ठ 153

10. वहीं, पृष्ठ 112

11. झा, बासुकीनाथ (सं.), घर-बाहर (अक्टूबर-दिसंबर, 2007) चेतना समिति, पृष्ठ

-डॉ. राहुल सिद्धार्थ

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन, विश्वविद्यालय,

साँची, मध्यप्रदेश